प्राचीन साहित्य श्रेणी 3

परमात्मा महावीर जन्मकल्याणक पर
जयसागरोपाध्याय विरचिता

श्री महावीर विनती

संपादक : मणिगुरु चरणरज
आर्य मेहुलप्रभसागर

कृति परिचय,

तीर्थंकर परमात्मा की आराधना चतुर्विध संघ में सामूहिक एवं व्यक्तिगत रूप से प्रतिदिन अनेक बार की जाती है। वे हमारे साध्य हैं। उनकी आराधना के द्वारा हमें उनके जैसा बनना है।

उत्तराध्ययन सूत्र में परमात्मा महावीर ने स्तवन करने से जीव क्या प्राप्त करता है?इसके उत्तर में फरमाया है-

थयथुइमंगलेणं भंते! जीवे किं जणयइ?

थयथुइमंगलेणं नाणदंसण- चरित्तबोहिलाभं जणयइ। नाणदंसण चरित्तबोहिलाभसंपण्णे य जीवे अंतकीरियं कप्पविमाणोववत्तियं आराहणं आराहेइ।

अर्थात् स्तव, स्तुति मंगल से जीव को ज्ञान, दर्शन, चारित्र, बोधिलाभ की प्राप्ति होती है एवं ज्ञान, दर्शन, चारित्र, बोधिलाभ से युक्त आत्मा आराधनायुक्त बनता है। उस आराधना से अंत:क्रिया मोक्ष को प्राप्त करता है, भवितव्यता परिपक्व न हुई हो तो सौधर्मादि वैमानिक देवलोक में आरोहण करता है फिर मुक्ति सुख को प्राप्त होता है।

प्रस्तुत महावीर विनती स्तवन में उपाध्याय प्रवर श्री जयसागरजी महाराज ने अपभ्रंश भाषा में परमात्मा को अनेक उपमाओं के द्वारा मंडित करते हुए वंदना की है। भाषा लालित्य की दृष्टि से यह कृति मनोहर है। सरल व सरस होने से सामूहिक गेय भी है। स्तवन का संक्षिप्त सार इस प्रकार है-

चौसठ इंद्र जिनकी नित्य सेवा करते है ऐसे श्री वीर जिनेश्वर देव की जय हो, मिथ्यात्व और भ्रम को दूर करने व कल्याण की प्राप्ति के लिए आपके चरणों में नतमस्तक हूँ।

कोटि भवों में भटकते हुए जीवों को तारने वाले, विषम अंधकार को नष्ट करने में सूर्य के समान परमात्मा महावीर स्वामी सज्जनों के लिए आशास्थान हैं।

सकल दु:ख रूपी ताप को हरने वाले, प्रवर संवर को धारण करने वाले, भव्य जनों रूपी मोर के समूह के लिए प्रमोदकारक और कल्याण-सुख-संपदा रूपी लता को बढाने वाले जलधर के समान परमात्मा महावीर की जय हो।

भव-भव में घूमते हुए जन-प्रवाह के वशीभूत मैंने झूठ-कपट अनेकों बार किये, अब आपके चरणों में आया हूँ कृपा कर मुझ पर सौम्य दृष्टि कीजिये।

चार गति रूप संसार में घूमते हुए दोषवश अनेक दु:खों को सहन किया, उन दु:खों को हीन बातें आपको कैसे कहूँ! कर्म की गति को धिक्कार हो।

क्षण में रागी, क्षण में विरागी, क्षण में मदन में मत्त तो दूसरे क्षण में दु:खी ऐसा कषाय रूपी मोहनीय कर्म से छलित होकर चक्र की तरह स्वर्ग, पाताल, योनि, जाति, कुल आदि कोई स्थान नहीं जहां पूर्व कर्मों के कारण भ्रमण नहीं किया हो।

जग को शरण देने वाले आपको प्राप्त कर अब मेरी सफल आशा है कि आप भव रूपी दु:खजाल को नष्ट करोगे।

नानाविध भवों में भटकते हुए एकमात्र आपको देव के रूप में देखा है, आपके चरण रूपी कमलों में आया हूँ, अब मुझे भवसागर से पार कीजिये।

सुलसा, रेवती और श्रेणिक को आपने अपनी ऋद्धि प्रदान की। आपका संगम निष्फल नहीं हो सकता अत: मुझे भी एक बार वैसी सिद्धि दीजिये।

आषाढ सुदि षष्ठी को च्यवन से और चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि को जन्म से जगत में आनंद हुआ। मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी को चारित्र अंगीकार किया। वैशाख शुक्ला दशमी के दिन केवलज्ञान की संपत्ति को प्राप्त किया।

कार्त्तिक अमावस्या को शिव-रमणी के साथ आपने पाणिग्रहण किया, उस शिव-रमणी को मात्र एकबार देखने की उत्कट अभिलाषा है, कृपा कर मेरी अभिलाषा पूर्ण कीजिये।

इस प्रकार वीर जिनेश्वर का स्तवन करने से मेरा पूरा दिन सफल हुआ। उनके चरणों में जो वंदन करते है वे बोधिलाभ को प्राप्त कर चिरकाल तक आनंद करते हैं।

कर्ता परिचय

उपाध्याय जयसागरजी महाराज खरतरगच्छाचार्य श्री जिनराजसूरीश्वरजी महाराज के सुशिष्य थे। इनका आचार्य पद काल वि.सं. 1433 से 1461 तक का है। अत: उसी समय आपकी दीक्षा उनके कर-कमलों से संपन्न हुई। संवत् 1475 में श्रुतसंरक्षक आचार्यों में मुर्धन्य श्री जिनभद्रसूरीश्वरजी महाराज ने आपको उपाध्याय पद से विभूषित किया।

आप सुकवि, गीतार्थ, प्रभावक थे। लक्षण साहित्य के आप विद्वान थे। संवत् 1503 पालनपुर में रचित पृथ्वीचंद्र चरित में आपने अपनी दीक्षा, विद्या और पददाता गुरुओं का उल्लेख किया है-

तत्पट्टशाद्वलवक्ष:स्थलकौस्तुभसन्निभ:।

श्रीजिनराजसूरीन्द्रो योऽभूद्दीक्षागुरु र्मम।।3।।

तदनु च श्रीजिनवर्द्धनसूरि: श्रीमानुदैदुदारमना:।

लक्षणसाहित्यादिग्रन्थेषु गुरु र्मम प्रथित:।।4।।

श्रीजिनभद्रमुनीन्द्रा: खरतरगणगगनपूर्णचन्द्रमस:।

ते चोपाध्यायपदप्रदानतो मे परमपूज्या:।।5।।

आपकी गृहस्थ अवस्था का परिचय अर्बुद प्राचीन जैन लेख संदोह भाग-2 के शिलालेख क्रमांक 442, 449, 455, 456, 457 और पाटण जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह के शिलालेख क्रमांक 552 के अनुसार ओसवाल दरड़ा गोत्रीय संघपति खीमसिंह के पुत्र हरिपाल की पत्नी सीता के पुत्र आसराज की भार्या सोषू के आप पुत्र थे। संघपति मंडलिक जिसने आबु महातीर्थ पर खरतरवसही नामक जैन मंदिर का निर्माण करवाया, वे आपके गृहस्थावस्था के भाई थे।

लेखांक 455 द्रष्टव्य है-

।। सं० 1515 वर्षे आषाढ वदि 1 शुक्रे श्रीअर्बुदगिरिमहातीर्थे ..... तत्पुत्र हरिपाल भा० सीतादे पुत्र सा० आसराज भार्या सोषू तत्पुत्र श्रीजयसागरोपाध्यायबांधवेन संघाधिपतिमंडलिकेन ..... परिवारसहितेन श्रीनवफण पार्श्वनाथबिंबं कारितं प्रतिष्ठितं श्रीखरतरगच्छाधीश्वर श्रीजिनभद्रसूरि-पट्टालंकार श्रीजिनचंद्रसूरिभि:।।

आपके द्वारा रचित संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और मरुगुर्जर भाषा में अनेक कृतियां प्राप्त होती है। जिनमें सं.1478 में पाटण में रचित पर्वरत्नावली, संदेह दोहावली टीका, गुरुपारतंत्र्य वृत्ति, उपसर्गहर वृत्ति, भावारिवारण वृत्ति, नेमिजिन स्तुति टीका, उक्ति समुच्चय सहित अनेक ग्रंथ प्राप्त होते हैं।

गेय रचनाओं में गिरनार, खंभात, मांडवगढ, शंखेश्वर, मरुकोट, नागद्रह, जीरापल्ली, नगरकोट्ट सहित विविध चैत्यपरिपाटी स्तव, नानाविध विनती स्तवन, जिनकुशलसूरि सप्ततिका, वयरस्वामी रास, गौतमस्वामी चतुष्पदिका, नेमिनाथ विवाहलो, अर्बुद तीर्थ विज्ञप्ति, पंचवर्गपरिहार पार्श्व स्तोत्र सहित पचासों रचनाओं से आपने साहित्य को समृद्ध किया।

संघपति अभयचंद्र के निकाले हुए यात्रासंघ के साथ आपने मरुकोट महातीर्थ की यात्रा की। फरीदपुर नगर में आपने कई ब्रह्म-क्षत्रियों को जैन बनाया, सिंधु-पंजाब आदि प्रदेशों में जैन धर्म का प्रसार, अप्रसिद्ध तीर्थ इत्यादि अनेक वृत्तांत से गुंफित विस्तृत वर्णन वाला पत्र विज्ञप्ति त्रिवेणी के नाम से रचकर संवत् 1484 माघ सुदि 10 को आचार्य जिनभद्रसूरिजी महाराज को भेजा था। जो प्रकाशित है। तत्कालीन अनेक नगरों और तीर्थों के नाम इस पत्र में प्राप्त होते हैं।

आचार्य श्री जिनभद्रसूरिजी महाराज के श्रुतसंरक्षण के भगीरथ कार्य में उपाध्याय जयसागरजी महाराज का भी पूरा सहयोग रहा था।

आपकी शिष्य परंपरा विशाल रही है। शिष्यों में मेघराज गणी, सोमकुंजर, रत्नचंद्रोपाध्याय आदि नाम सुविख्यात हैं। शिष्य परंपरा में भक्तिलाभोपाध्याय, पाठक चारित्रसार, ज्ञानविमलोपाध्याय, श्रीवल्लभोपाध्याय आदि अनेक विद्वान हुए हैं।

प्रति परिचय

श्री महावीर विनती स्तवन नामक हस्तलिखित कृति की प्रतिलिपि पंडित प्रवर डॉ. जितेन्द्रभाई बी. शाह के द्वारा लालभाई दलपतभाई भारतीय विद्या मंदिर अहमदाबाद से प्राप्त हुई है। एतदर्थ वे साधुवादार्ह हैं। पूज्यश्री पुण्यविजयजी संग्रह के प्रति क्रमांक 3420 में पूज्य जयसागरजी महाराज की अनेक रचनाओं का पडिमात्रा में सुवाच्य अक्षरों व मध्य वापिका के साथ लेखन किया हुआ है। प्रति का प्रथम पत्र एवं दस के बाद के पत्र संभवत: अनुपलब्ध हैं। प्रति लेखक विद्वान मुनिराज रहे होंगे। लेखन प्राय: पंद्रहवीं या सोलहवीं शताब्दी का प्रतीत होता है। उपरोक्त प्रति के पत्र संख्या 6 पर यह कृति लिखित है। खरतरगच्छ साहित्य कोश में इस कृति का उल्लेख संख्या 2064 पर है।

जयसागरोपाध्याय विरचिता

श्री महावीर विनती

जय जय वीर जिणेसर देव,

चउसठि इंद्र करइ नितु सेव।
श्रेय काजि तानुय पइ लागउ,
अलविहिं मिथ्या तह भ्रम भागउ।।1।।
भाग सोभाग संभाग फल कारणो,
विकट भव कोटि भय भीरू जण तारणो।
तरुण रवि बिंब जिम विसम तम नासणो,
सुहइ सिरि वीरजिण सुजण आसासणो।।2।।
सयल दुह तापहर पवर संवरधरो,
भवियण मोर गण मण पमोयंकरो।
श्रेय सुख संपदा वेलि वद्धारणो,
जयउ जगि वीर जिण जलद साधारणो।।3।।
भास
साधारण सवियह सत्तु मित्त,
परु हसिय हं पिय हर एगचित्त।
अडवडिय हं मुझ आधार एहु,
प्रभु आणिनु आणिनु भवह छेहु।।4।।
हउं भमि भमि भागउ भवह मांहि,
मइं कूड कपट किय करि जण प्रवाहि।
हिव आविय तुय पहु पाय हेठि,
मुय सामुहिं करि करि सोम द्रेठि।।5।।
भास
अणो वारि संसारि चउगइ फिरंता,
सहिया दोष वसि दुक्ख जे मइं अणंता।
किसुं ते कहु आपणी वात हीणी,
हहा कर्मनी धाडि धिग जउ न खीणी।।6।।
क्षणं रागि रातउ क्षणं मयणि मातउ,
क्षणं दुखि तातउ क्षणं भवि विरातउ।
कषाए मिली एम आवर्त्ति पाडिउ,
न को वइरि ए छल लही चक्रि चाडिउ।।7।।
न ते देव दोसा न ते पाप पोसा,
न ते सास सोसा न ते मर्म्म मोसा।
न जे देव मूं केड मेल्हइ लगार,
मरे मोहणी कर्म्म केरउ विकार।।8।।
न तं सग्गि पातालि आगासि ठाणं,
न सा योनि जाई कुलं तं पहाणं।
असंखे परे कर्म्म नइ मर्म्मि भेलिउ,
जिहां देव हउं नवनवी परि न खेलिउ।।9।।
भास
तउ जगजीवन जगसरण, चूरइ भव दुहपास।
ते तउं मइं पामिय कटरि(करि),
पूरि अम्हारिय आस।।10।।
नव नव परिभवि भमत मइं,
इकु तउं दीठउ देव।
तावि लगउ तुय पय कमलि,
तारि तारि मु हेव।।11।।
सुलसा रेवति श्रेणियहं,
तइं दीधी निजि सिद्धि।
तुय संगम निप्फल नहिय,
तिम मूं पुणि दइ सिद्धि।।12।।
आषाढ हसिय छट्ठि दिणि,
चवियउ चरम जिणिंद।
चैत्र धवल तेरिसि निसिहिं,
जंमणि जग आणंद।।13।।
मग्गसिरह सामल दसमि,
आदरियउं चारित्त।
वइसाहह ऊजल दसमि,
वर केवल संपत्त।।14।।
कातिय मावसि सिव रमणि,
जे तइं परिणिय सार।
तिह जोवानि खंति मह,
पूरि तुं प्रभु इकुवार।।15।।
इय मइ वीर जिणेसर थुणियउ,
ताम सफल दिन एहु जु गणियउ।
तसु पय जे जइसायरु वंदइं,
बोधिलाभ गुणि ते चिरु नंदइं।।16।।
इति श्री महावीर विनती

-श्री जिनहरि विहार धर्मशाला, तलेटी रोड़
पालीताना 364270 गुजराज